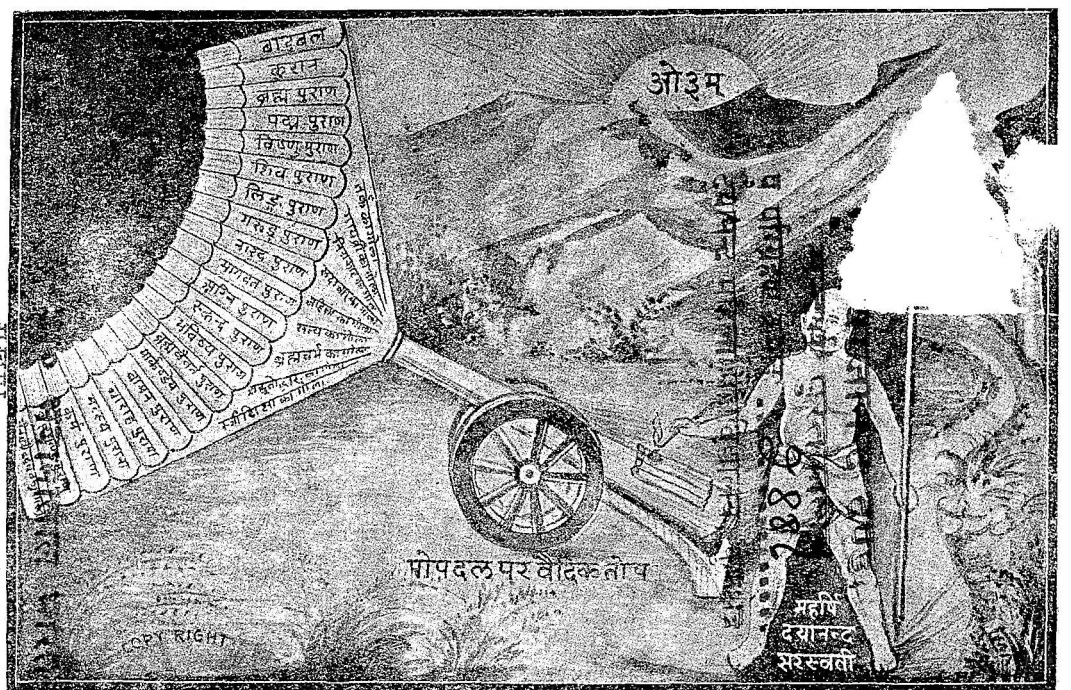

ले, आचार्य शिवपूजनसिंह कुशवाहा पथिक. बी. ए. सिद्धान्त वाचस्पति साहित्यालंकार

मूल्य २५ न. पै.

प्रकाशक :—जयदेवग्रन्थमाला पुस्तकविक्रेता बड़ोदा

श्री आचार्य वैद्यनाथ शास्त्रीद्वारा रचित

शिक्षण तरंगिणी —पृ. सं. २२० बढ़िया छपाई शिक्षा के प्रारम्भिक वैदिक काल से लेकर मनोविज्ञान की स्थिति उपनिषदों में शिक्षा का रहस्य, गणितविज्ञान, भारतीय साहित्य में मेष वाद्य शिरोमणि वीणा ई० विषयों का समावेश है मू. ५) डाक व्यय पृथक् ।

वैदिक ज्योति पृ. सं. २५० से अधिक बढिया छपाई-४० प्रकरण। वैदिक 'क' और 'ख' ऋषि दयानन्द और वेद, देवता वैदिक आपस्तत्व का दार्शनिक स्वरूप परमेश्वर के गुण कर्म स्वभाव, परम सत्य का खोजी ब्रह्मानन्द को प्राप्त करता हैं मृत्युंजयता का मार्ग इ० अनेक गहन विषयों को सरलता पूर्वक सुलभ ढंग से समझाया गया है मू. ७) डाक व्यय पृथक्।

कर्ममीमांसा--नवीन संशोधित संस्करण में नीति के मूल तत्व, आपद्धर्म कर्तव्य, और अधिकार, नीति पर आदि मौलिक तथा सारगर्भित सामग्री दी है। मू. १.२५ न. पै.

अद्‌भुत वैज्ञानिक जादू कौशल

जिसमें समस्त विज्ञान के खेल हैं। कोलेजोमें पढनेवाले सायन्स के छात्रों लिये अत्यंत उपयोगी हैं। इसके अतिरिक्त इस में द्रव्योपार्जन के लिये सस्ते और परीक्षित औद्योगिक नुस्खे तथा प्रत्येक जादूगरों के जानने के लिये सभीं बातोंपर प्रकाश डाला हैं। आजही आर्डर दें मू. ५।) रु.

विश्वधर्म परिचय समस्त प्रचलित मतों सम्प्रदायों के सम्बन्ध में तुलनात्मक अभ्यास के लिए एक उच्चतम ग्रंथमूल्य सजिल्द ६) रु. डाकव्यय पृथक पृ० सं. ५०० से ऊपर

जयदेव ब्रदर्स वडोदा।

शिवलिङ्गपूजा-पर्यालोचन

लेखकः—
(वैदिकगवेषकः—**आचार्य शिवपूजन सिंह कुशवाहा, पथिक**
बी. ए विद्यावाचस्पति, साहित्यालङ्कार कानपुर)

सम्प्रति पौराणिकोंके मन्दिरों में जो शिवकी पूजा होती है वह उनके लिङ्ग (उपस्थेन्द्रिय) और पार्वती के भग (योनि) की होती है । जब कभी आर्य समाज और पौराणिक समाज में इस विषय पर शास्त्रार्थ होता है तो पौराणिक पण्डित 'लिङ्ग' और 'भग' का अन्य ही अर्थ लगा कर अपना पिण्ड छुड़ाने का प्रयास करते हैं । नीमच शास्त्रार्थ, में पं. बुद्धदेवजी विद्यालंकार के प्रमाण प्रस्तुत करने पर श्रीकालूराम शास्त्रीने इसी प्रकार प्रयास किया था । जमुई शास्त्रार्थ में भी इसी प्रकार प्रयास किया था । दोनों ही स्थलों में श्री कालूराम शास्त्री की मिट्टी पलीद हुई थी ।

श्रीमाधवाचार्य शास्त्रीने 'लिंग' का अर्थ—"आकाश, काल, दिशा, मन और आत्मा आदि निराकार पदार्थ" किया है ।[1] इसी प्रकार 'भग' का अर्थ "माया प्रकृति ऐश्वर्य"[2] किया है ।

---

१ 'ॐकार और शिव लिङ्ग' द्वितीयावृत्ति पृष्ठ २० 'पुराण दिग्दर्शन' द्वितीय संस्करण पृष्ठ ३७७

२ वही, पृष्ठ २२ तथा 'पुराण-दिग्दर्शन' पृष्ठ ३७७.

श्रीकालूराम शास्त्री कल्पना करते हैं कि—' लिङ्ग क्या है ब्रह्माण्ड का नकशा है ।[३]

' जल हरी का अपभ्रंश जलहरी है । यह सप्तावरण का नकशा है ब्रह्माण्ड के चारों तरफ सात आवरण रहते हैं वे ब्रह्माण्डकी चीजको आवरणसे बाहर नहीं जाने देते उनका ही नकशा यह जलहरी है । '[४]

इस सम्बन्ध में ऊहापोह से विचार किया जाता है।

पौराणिकों का यह कथन ठीक है कि ' लिंग ' और ' भग ' के अन्य भी अर्थ हैं पर ' शिव लिङ्ग ' की जो पूजा होती है वह उन अर्थों का द्योतक नहीं है, वरन् मूत्रेन्द्रिय से ही तात्पर्य है । इसकी पुष्टि पौराणिकों के मान्य ग्रन्थों से ही होती है । यथा'—

' शम्भोः पपात भुवि लिंगमिदं प्रसिद्धं शापेन तेन च भृगोर्विपिनेगतस्य ॥ तं ये नरा भुवि भजन्ति कपालिनं तु तेषां सुखं कथमिहाऽपि परत्र मातः ॥

(देवीभागवत, स्क० ५ अ० १९ श्लोक १९)

श्री नीलकण्ठकी संस्कृत टीका:— "शंभोः पपातेति-यस्य शंभोः, सती वियोगाघरण्यतस्य भृगोः शापाल्लिंगं पतितमिदं पुराणादिषु प्रसिद्धम् । स्वलिंग पालनेपि यो न समर्थस्तं शिवं ये भजन्ति तेषामिह परत्र कथं सुखं भूयान्न कथमपीत्यर्थ ॥'

---

३ ' आर्य समाज की मौत ' प्रथम संस्करण पृष्ठ २०३ तुलना करो ' पुराण धर्म ' पूर्वार्द्ध द्वितीयावृत्ति, पृष्ठ २६७ से २६९ तक.

४. ' आर्य समाज की मौत ' पृष्ठ २०५-२०६.

विद्यावारिधि पं० ज्वाला प्रसादमिश्रकृत भाषाटीका:—
' हे मात! सती के वियोग से महादेव के अरण्य मध्यस्थ ऋषियों-के आश्रम में गमन करने पर भृगु मुनिके शाप से उनका लिंग पृथ्वी में गिरा, यह तो सर्वत्र ही प्रसिद्ध है। अतएव जो अपने लिंग की भी रक्षा करने में समर्थ नहीं है उन शम्भूको जो मनुष्य भजते हैं उनको इसकाल और परकालमें किस प्रकार सुख होगा?'

यहाँ पर श्री कालूराम, श्री माधवाचार्य लिंग का क्या अर्थ लेंगे जब कि दो दो पौराणिक विद्वान् मूत्रेन्द्रिय ही अर्थ लेते हैं।

इसी पुराणने शिवजी को देहधारी भी बतलाया है तब यह कथा आलंकारिक भी नहीं हो सकती है।

राजा जनमेजय के प्रश्न करने पर व्यासजी उत्तर देते हैं कि:—

' किं विष्णुः किं शिवो ब्रह्मा मघवा किं बृहस्पतिः। देह वान्प्रभवत्येव विकारैः संयुत स्तदा॥ १९॥ रागी विष्णुः शिवो रागी ब्रह्मापि रागसंयुतः। 'रागवान्किमकृत्यं वैनकरोति नराधिप।' रागवानपि चातुर्य्याद्विदेह इव लक्ष्यते॥ १६॥

(देवीभागवत, स्क० अ० ११)

विद्यावारिधि पं० ज्वाला प्रसाद मिश्र कृत टीका:—
' व्यासजी बोले, हे राजन्! इन्द्र हो बृहस्पति हो ब्रह्मा हो विष्णु हो या महादेव हो जो देह धारण करेगा उसको ही पूर्वोक्त अहंकार और लोभादि विकार दोष में लिप्त होना पड़ता हैं इसमें सन्देह नहीं।॥ १९॥ हे महाराज! ब्रह्मा, विष्णु, और

शिव यह सभी विषयानुरागी हैं । अतएव अनुरागी व्यक्ति क्या अकार्य्य नहीं कर सकता ? ॥ १६ ॥'

'आनर्तदेश मुनिजनाश्रय वनमें किस प्रकार भगवान् शंकर नग्न वेशमें पहुँचे । किस प्रकार मुनि पत्नियोंका आचरण शिष्टता की सीमा पार कर गया, मुनिगण यह सब देखकर क्रुद्ध होकर बोले:— "यस्मात्पापत्वयास्माकं आश्रमोऽयं विडम्बितः । तस्माल्लिंग पतत्वाशु तवैव वसुधातले ॥"

[पद्म पुराण, नागरखण्ड १-२०]

पं. क्षितिमोहन सेन शास्त्री, एम ए शान्तिनिकेतन की टीका:—'रे पाप, तूने चूँकि हमारे आश्रम को विडम्बित किया है इसलिए तेरा लिंग अभी भूपतित होवे ।।'[५]

वेदोंमें कल्याणकारी परमात्माको शिव शङ्कर नामसे कहा गया है । पौराणिक शंकर, नरमुण्डमालाधारी, भस्मभूषण भूषित, वृषारोही, सर्पकण्ठ, नृत्यप्रिय नटवर, नन्दावेश्यागामी, अनुसूया धर्मविध्वंसक, हस्ते लिंगधृक्, की चर्चा चारों वेदोंमें कहीं नहीं हैं ।

शिवलिंगकी स्थापना क्यों ?

"दारू नाम वनं श्रेष्ठं तत्रासनृषिसत्तमाः । शिव भक्ताः सदा नित्यं शिवध्यान परायणाः ॥ ६ ॥ ते कदाचिद्वने याताः समिधा हरणाय च । सर्वे द्विजर्षभाः शैवाः शिवध्यान परायणाः ॥ ८ ॥ एतस्मिन्नन्तरे साक्षाच्छंकरो नीललोहितः । विरूपं च समास्थाय परीक्षार्थं समागतः ॥ ९ ॥ दिगम्बरोऽति तेजस्वी

५. 'भारत वर्षमें जातिभेद' प्रथम संस्करण पृष्ठ ६६-६७

भूतिभूषणभूषितः । स चेष्टां सकदक्षां च हस्ते लिंगं विधारयन्
॥ १० ॥ मनसा च प्रियं तेषां कर्तुं वै वनवासिनाम् । जगाम
तद्वनंप्रीत्या भक्तप्रीतो हरः स्वयम् ॥ ११ ॥ तं दृष्ट्वा ऋषिपत्न्यस्ताः
परं त्रासमुपागताः । विह्वला विस्मिताश्चान्याः समाजग्मुस्तथा पुनः॥ १२॥
आलिलिंगुस्तथा चान्याः करंधृत्वा तथा पराः । परस्परंतु संघर्षा-
त्संमग्नास्ताः स्त्रियस्तदा ॥ १३ ॥ एतस्मिन्नेव समये ऋषिवर्याः
समागमन् । विरुद्धं तं च ते दृष्ट्वा दुःखिताः क्रोधमूर्च्छिताः
॥ १४ ॥ तदा दुःखमनुप्राप्ताः कोयं कोयं तथाब्रुवन् । समस्ता
ऋषयस्ते वै शिव माया विमोहिताः ॥ १५ ॥ यदा च नोक्तवान्
किंचित्सोऽवधूतो दिगम्बरः । ऊचुस्तं पुरुषं भीमं तदा ते
परमर्षयः ॥ १६ ॥ त्वया विरुद्धं क्रियते वेदमार्ग विलोपियत् ।
ततस्त्वदीयं तल्लिंगं पततां पृथिवी तले ॥ १७ ॥ इत्युक्ते तु तदा
तैश्च लिंगं च पतिते क्षणात् । अवधूतस्य तस्याशु शिवस्याद्भुत
रूपिणः ॥ १८ ॥ तल्लिंगं चाग्निवत्सर्वं यद्ददाह पुरः स्थितम् ।
यत्र यत्र च तद्याति तत्र तत्र दहेत्पुनः ॥ १९ ॥ पाताले च
गतं तच्च स्वर्गे चापि तथैव च । भूमौ सर्वत्र तद्यातं न कुत्रापि
स्थिरं हि तत् ॥ २० ॥ लोकाश्च व्याकुला जाता ऋषयस्तेऽति
दुःखिताः । न शर्म लेभिरे केचिद्देवाश्च ऋषयस्तथा ॥ २१ ॥
न ज्ञातस्तु शिवो यैस्तु ते सर्वे च सुरर्षयः । दुःखिता मिलिता-
श्शीघ्रं ब्रह्माणं शरणं ययुः ॥ २२ ॥....इत्युक्तश्च मुनीशैस्तैः सर्व-
लोक पितामहः । मुनीशांस्तांस्तदा ब्रह्मा स्वयं प्रोवाच वै तदा
॥ ३१ ॥ आराध्य गिरिजां देवीं प्रार्थयन्तु सुराः शिवम् । यो
निरूपाभवेच्चेद्वै तदा तत्स्थिरतां व्रजेत् ॥ ३२ ॥....पूजितः परया

भक्त्या प्रार्थितः शंकरस्तथा । सुप्रसन्नस्ततो भूत्वा तानुवाच महेश्वरः ॥ ४४ ॥ हे देवा ऋषयः सर्वे मद्वचः शृणुतादरात् । योनिरूपेण मल्लिंगं धृतं चेत्स्यात्तदा सुखम् ॥ ४५ ॥ पार्वतीं च विना नान्या लिंगं धारयितुं क्षमा । तया धृतं च मल्लिंगं द्रुतं शान्तिं गमिष्यति ॥ ४६ ॥... प्रसन्नां गिरिजां कृत्वा वृषभध्वज-मेव च । पूर्वोक्तं च विधिं कृत्वा स्थापितं लिंगमुत्तमम् ॥ ४८ ॥ ....हाटकेशमिति ख्यातं तिच्छिवा शिवमित्यपि । पूजनात्तस्य लोकानां सुखं भवति सर्वथा ॥ ५३ ॥

शिवपुराण, कोटिरुद्रसंहिता ४, अध्याय १२,

अर्थ-"दारु नामका एक वन था, वहां पर सत्पुरुष लोग रहते थे, जो शिवके भक्त थे तथा नित्यप्रति शिव का ध्यान किया करते थे ॥ ६ ॥ वे कभी लकड़िया चुनने के लिए सब के सब श्रेष्ठ ब्राह्मण, शिव के भक्त, तथा शिव का ध्यान करने वाले थे ॥ ८ ॥ इतने में साक्षात् महादेवजी विकट रूप धारण कर उनकी परीक्षा के निमित्त आए ॥ ९ ॥ दिगम्बर अति तेजस्वी विभूति भूषण से शोभायमान, कामियों के समान दुष्ट चेष्टा करते हुए, हाथ में लिंग धारण करके ॥ १० ॥ मन से उन वनवासियों का भला करने के लिए भक्तों पर प्रसन्न होकर शिवजी स्वयं प्रीति से उस वन में गए ॥ ११ ॥ उनको देख कर ऋषि पत्नियाँ अत्यन्त भयभीत होगईं, व्याकुल तथा विस्मित हुईं, कईं वापस आ गईं ॥ १२ ॥ कईं आलिंगन करने लगीं, कईं (स्त्रियों) ने हाथ में धारण कर लिया तथा परस्पर के संघर्ष से वे स्त्रियां मग्न होगईं ॥ १३ ॥ इसी अवसर में वे श्रेष्ठ

ऋषि भी आ गए । इस प्रकार के विरुद्ध काम को देखकर वे दुःखी हुए और क्रोध से मूर्च्छित हो गए ॥१४॥ तब दुःख से को प्राप्त हुए, कहने लगे–ये कौन हैं । ये कौन हैं ? वे सबके सब ऋषि, शिवकी मायासे मोहित हो गये ॥ १५ ॥ जब उस अवधूत दिगम्बरने कुछ भी उत्तर न दिया तब वे परम ऋषि उस भयंकर पुरुष को यों कहने लगे ॥ १६ ॥ तुम जो यह वेद के मार्ग को लोप करने वाला विरुद्ध काम करते हो इसलिए तुम्हारा यह लिंग पृथ्वीपर गिर पड़े ॥ १७ ॥ उनके इस प्रकार कहने पर उस अद्भुतरूपधारी अवधूत शिवका लिंग उसी समय गिर पड़ा ॥ १८ ॥ उस लिंगने सब कुछ जो आगे आया अग्नि की भाँति जला दिया जहाँ जहाँ वह जाता था वहाँ वहाँ सब कुछ जला देता था ॥ १९ ॥ वह पातालमें भी गया, वह स्वर्ग में भी गया वह भूमि में सर्वत्र गया किन्तु वह कहीं भी स्थिर न हुआ ॥ २० ॥ सारे लोक व्याकुलहो गए तथा वे ऋषि अत्यन्त दुःखित हुए ॥ कोई देवता तथा ऋषि कल्याण को नहीं प्राप्त हुए ॥ २१ ॥ जिन्होंने शिवजी को नहीं जाना वे सम्पूर्ण देवर्षि दुःखित हुए और परस्पर मिलकर तत्काल ब्रह्मा की शरण में गए ॥२२॥ उन मुनीश्वरोंके ऐसा करने पर वह सब लोकोंके पिता यह ब्रह्माजी उस समय उन ऋषियों से स्वयं बोले ॥२३॥ हे देवताओ ! देवी पार्वतीकी आराधना करके पश्चात् शिवजीकी प्रार्थना करो । यदि पार्वती योनिरूपा हो जावें तो वह लिंग स्थिरताको प्राप्त हो जावेगा ॥२२॥ उस समय परम भक्तिसे पूजित और सत्कार किए हुए शिवजी अति प्रसन्न होकर

उन ऋषियों से बोले ॥ ४४ ॥ हे समस्त देवताओ। और ऋषियो ! आप सब मेरी बात आदर से सुनें यदि मेरा लिंग, योनिरूप से धारण किया जावे तो शान्ति हो सकती है ॥ ४५ ॥ मेरे लिंग को पार्वती के बिना और कोई धारण नहीं कर सकता । उससे धारण किया हुआ मेरा लिंग शीघ्र ही शान्ति को प्राप्त हो जावेगा ॥ ४६ ॥ पार्वती तथा शिव को प्रसन्न करके पूर्वोक्त विधि के अनुसार वह श्रेष्ठ लिंग स्थापित किया गया ॥ ४८ ॥ वह पार्वती तथा शिव की प्रतिमा हाटकेश नाम से प्रसिद्ध हुई, उन के पूजन करने से सब प्रकार लोकों को सुख होता है ॥ ५१ ॥'

श्रीफालूरामशास्त्री की कल्पनाः—

(क) 'स्त्रियोंका शंकरसे लिपटना नहीं लिखा किन्तु परस्पर में आलिंगन करना लिखा हुआ है।'

(ख) यहाँ पर अज्ञ लोग समझे हैं कि महादेव की मूत्रेन्द्रिय गिरगई, समझ की बलिहारी है । मूत्रेन्द्रिय नहीं गिरी किन्तु शंकर के हाथ में जो लिंग था उसको शाप हुआ है वह गिर गया.... ।'

(ग) 'शाप लिंग गिरने का हुआ है । कटकर गिरने का नहीं हुआ, मूत्रेन्द्रिय विना कटे गिर नहीं सकती । ...

(घ) पं० ज्वाला प्रसादजी मिश्र इस लिंगको ज्योतिर्मय लिंग के नाम से याद करते हैं फिर हम इसको मूत्रेन्द्रिय कैसे मान लें ? '[६]

६. 'पुराणवर्म' पूर्वार्ध द्वितीयावृत्ति पृ. २८४–२८५

समीक्षा—(क) पौराणिक पं. कालूराम शास्त्री केवल कुतर्क करना जानेत थे। यदि ऋषिपत्नियाँ शंकरसे नहीं लिपटीं किन्तु भयभीत होकर परस्परमें लिपट गईं, तब वे दूषित कैसे हुईं ? और ऋषियोंको क्रोध करनेकी क्या आवश्यकता थी ?

(ख) शंकर के हाथ अन्य कोई लिंग न था, वरन् वे नग्न होकर अपने लिंगको ही हाथसे पकडे हुए थे।

(ग) आपका यह शब्दजाल है। कटेगा तभी गिरेगा।

(घ) पं. ज्वाला प्रसाद मिश्र कोई ऋषि, महर्षि तो थे नहीं जिनकी कल्पनाको मान लिया जाय। श्लोकमें कहीं ज्योतिर्मय लिंग की चर्चा भी नहीं है। यह तो आप दोनोंकी कल्पना है।

कूर्म पुराण अ० ३८ में भी आता है :—

" पुरा दारु वने रम्ये देव सिद्ध निषेविते। सपुत्रदारतनया-स्तपश्चेरुः सहस्रशः ॥ २ ॥ प्रवृत्तं विविधं कर्म प्रकुर्वाणा यथाविधि। यजन्ति विधिधैर्यज्ञैस्तपन्ति च महर्षयः ॥ ३ ॥ चामीकरवपुः श्रीमान् पूर्णचंद्र निभाननः। मत्तमातंग गमनो दिग्वासा जगदीश्वरः ॥ ७ ॥ जातरूपमयीं मालां सर्व रत्नैरलंकृताम्। दधानोभगवानीशः समागच्छातेसस्मितः ॥ योऽनन्तः पुरुषो योनिर्लोकानामव्ययोहरिः। स्त्रीवेषं विष्णुरास्थाय सोऽनुगच्छाति शोभनम् ॥ ९ ॥ सम्पूर्ण चन्द्रवदनं पीनोन्नतपयाधरम्। शुचिस्मितं सुप्रसन्नं रणन्नूपुरकद्वयम् ॥ १० ॥ सुपीतवसनं दिव्यं श्यामलं चारुलोचनम्। दृष्ट्वा चरन्तं विश्वेशं तत्र तत्र पिनाकिनम्। मायया मोहितानार्य्यः देवदेवं समन्वयुः। ॥ १३ ॥ विस्रताभरणाः सर्वात्यक्त्वालज्जा पतिव्रता। सहैव तेन कामार्तविलासिन्यश्चरन्तिहि

॥१४॥ ऋषीणां पुत्रकायेस्युर्युवानो जित मानसाः । अन्वागमन् हृषीकेशं सर्वे कामप्रपीडिताः ॥ १५ ॥ गायन्तिनृत्यन्तिविलास-युक्तानारीगणाः नायकमेकमीशम् । दृष्ट्वा सपत्नीकमतीवकान्तमिष्टं तथा लिंगितमाचरन्ति ॥१६॥ दृष्ट्वानारीकुलंरुद्रं पुत्रान्पिचकेशवम् । मोहयन्तं मुनिश्रेष्ठाः कोपंसंदधिरेभृशम् ॥ २१ ॥ तं भर्त्स्य तापसाः विप्राः समेत्यवृषभध्वजम् । को भवानितिदेवेशं पृच्छन्ति-स्मविमोहिताः ॥२४॥ सोऽब्रवीद् भगवानीशः तपश्चर्तुमिहागतः । तस्येतवाक्यमाकर्ण्य भृग्वाद्याः मुनि पुंगवाः । ऊचुर्गृहीत्वा वसनं त्यक्त्वाभार्यां तपश्चर । ताडयांचक्रिरे दण्डैर्लोष्टभिर्मुष्टिभिर्द्विजाः ॥ ३८ ॥ दृष्ट्वा चरन्तं नग्नं गिरिशं विकृत लक्षणम् । प्रोचुरेतद् भवल्लिंगमुत्पाटय सुदुर्मते ॥३९॥ काश्चिद्दारुवनं पुण्यं पुरुषोतिवशो मनः । भार्ययाचारुसर्वांग्या प्रविष्टो नग्न एव हि ॥५२॥ मोहया-मायसवपुषा नारीणां कुलमीश्वरः । कन्यकानां प्रियो यस्तुदूषयामास पुत्रकान् ॥ ५३ ॥ अस्माभिर्विविधा शापाः प्रदत्तास्ते पराहताः । ताडितोऽस्माभिरत्यर्थंलिंगं तु विनिपातितम् ॥ ५४ ॥

अर्थ— पूर्वकाल में देवता और सिद्धों से सेवित सुन्दर दारु वनमें, पुत्र और स्त्रियों के सहित ऋषिगण तप कर रहे थे । विधि के अनुसार प्रवृत्त अनेक कर्म करते हुए अनेक यज्ञ और तप कर रहे थे । भगवान् शिव जिसका शरीर सोने के समान, मुख पूर्णचन्द्र के समान, चाल मतवाले हाथी के समान थी, सोनेकी माला धारण किए सब रत्नोंसे विभूषित नंगे हो कर मुस्कुराते जा रहे थे । संसारके उत्पत्तिस्थत जो अनन्त अव्यय विष्णु थे स्त्री वेष धारण करके उनके पीछे जा रहे थे ।

स्त्री वेषधारी विष्णुका मुख चन्द्र के समान उज्वल, उनका स्तन मोटा और ऊँचा ऊंचा है। दोनों पैरमें नुपूर बज रहे हैं पीत वस्त्र धारण किए हुए हैं हंस के समान जिनकी चाल है । कामियोंके मनको मोहित करनेवाला है।

विश्वेश शंकर जहाँ जहाँ जाते थे वहाँ वहाँ छलसे मोहित स्त्रियाँ उनके पीछे पीछे जाती थी। युवती स्त्रियाँ जिनके शरीर पर के आवरण सरक कर गिर गए थे, उन्हीं के साथ लज्जा परित्याग कर घूम रही थीं और ऋषियोंके तरुण लडके, काम से पीडित हो कर विष्णु के पीछे पीछे घूमने लगे। सब स्त्रियाँ उन्हें देख कर गाती और नृत्य करती थीं और आलिंगन करती थीं।

स्त्रियाँ, पुत्रों तथा केशव को देखकर ऋषि लोग बडे क्रोधित हुए उन्हें डांट डपट करके शंकर के पास आये और पूछा कि आप कौन हैं ? शंकरने कहा मैं तप करने के लिए आया हूँ। उनकी बात सुनकर भृगु प्रभृति ऋषियोंने वस्त्र पकड कहा कि स्त्रीको त्याग कर तप करो।

तब शिवने कहा कि तुम लोग तो स्त्रीके साथ हो, मुझे त्यागने को क्यों कहते हो। ऋषियोंने कहा कि व्यभिचारिणी स्त्रीको छोड देना चाहिए। हम लोगोंकी स्त्रियां ऐसी नहीं हैं इस लिए नहीं छोडते। शंकरने कहा कि मेरी स्त्री मनसे भी व्यभिचार नहीं करती। यह सुनकर ऋषियोंने कहा कि तुम मिथ्या बोलते हो यहांसे चले जाओ। इस कहा सुनीमें ऋषि गण शिव को 'यष्टि मुष्टि प्रहार'। अर्थात् लाठी और मुक्के की

चोट करते हुए बोले-' तू यह लिंग उत्पाटन कर।' शंकरने कहा कि यदि मेरे लिंगसे तुम्हें द्वेष है तो लो मैं उत्पाटन कर देता हूँ यह कह कर उन्होंने उत्पाटन कर दिया।

इसके पश्चात् वहाँसे सब लोग गायब हो गए और वशिष्ठ के आश्रम में गए। अरुन्धतीने उनकी पूजा की और उनके शरीरपर चोट देखकर औषधि लगा दी। उनके जाते ही उत्पात होने लगे। पृथ्वी कांप उठी, सूर्य का तेज क्षीण हो गया। ग्रह प्रभाहीन हो गए। ऋषिगण डरके मारे ब्रह्मा के पास गए और हाल कह सुनाया।

कोई अत्यन्त सुन्दर व्यक्ति सर्वाङ्ग सुन्दरी स्त्री के साथ नंगाही पवित्र दारु वन में आया और सब स्त्रियोंको मोह लिया और कन्याओं और पुत्रों को दूषित कर दिया। हम लोगोंने उसे गाली दी और मारा पीटा और उसका लिंग गिरा दिया कृपया बतलावें वह कौन था ?

ब्रह्माने कहा, तुमलोगों के बल पौरुष तप को धिक्कार है। जिसको यति लोग चाहते हैं। जिस के लिए लोग यज्ञ करते हैं उस शिव की तुम लोगों ने उपेक्षा की।

इसी प्रकार शिवलिङ्ग के सम्बन्ध में रहस्यमयी कथा अन्यत्र भी पायी जाती हैं। यथा—

"शिव पुराण, धर्म संहिता के दसवें अध्यायमें देखा जाता कि शिव ही आदि देवता हैं; ब्रह्मा और विष्णु को उनके ग का आदि मूल अन्वेषण करने जाकर हार माननी पड़ी ६-२१)। देवदारूवन में सुरतप्रिय शिव विहार करने लगे

(धर्म संहिता, १०,७८–७९) । मुनि पत्नियां काममोहित होकर नानाविध अश्लीलाचार करने लगीं (वही, ११२–१२८) । शिवने उनकी अभिलाषा पूरी की (वही, १५९) । मुनिगण काममोहिता पत्नियों को संभालने में व्यस्त हुए । (वही, १६०) । पर पत्नियाँ मानी नहीं (वही, १६१) । फलतः मुनियोंने शिव पर प्रहार किए (वही, १६२–१६३) । इत्यादि । अन्य सब मुनि–पत्नियों ने शिव को कामार्त्त होकर ग्रहण किया था, पर अरुन्धती ने वात्सल्य भावसे पूजा की (वही, १७८) भृगु के शाप से शिव का लिंग भूतल में पतित हुआ । (वही, १८७) । भृगु धर्म और नीतिकी दुहाई देने लगे वही, (१८८–१९२) । अन्त में मुनिगण शिवलिङ्ग की पूजा करने को बाध्य हुए (वही, २०३–२०७) ।

यही कथा **स्कन्दपुराण**, महेश्वर खण्ड, षष्ठाध्याय में है, और यह एकही कथा लिंग पुराण (पूर्व भाग; ३७ अध्याय, ३३-५०) में भी पाई जाती है । इसी तरह वायु पुराण के ५९ अध्याय में शिव की कथा कही गई है । [७]

"..... अस्मिंश्चैवतु नो राजा नास्ति कश्चिन्महावने । यस्ते छिनन्ति लिंगंवै परदाररतस्यतु ॥१॥ परदार रतस्यापि निर्लज्जस्य-दुरात्मनः । शिश्नस्योत्कर्तनं कार्यं नाऽन्योदंडः कदाचन ॥२॥ छित्वा वृषणं लिंगं गुरुदाररतः स्वयम् । गृहीत्वांजलिनामतुं संगच्छेनैर्ऋती दिशम् ॥३॥ अयं पुनर्निर्विवेको दुराचारोयदूमतिः ॥

७. आचार्य पं. क्षितिमोहन सेन शास्त्री, एम. ए. कृत "भारत वर्षमें जाति भेद" प्रथम संस्करण, पृष्ठ ६६.

स्वयंदंड्यस्त तोऽस्माभिः क्षेत्रदार हरोयतः ॥ ४ ॥ आततायी भवेद्वध्योद्वि जावाप्यथवामुनिः ॥ निघ्नन्तु स्त्रवाणैस्तुनास्तितत्र विचारणा ॥ ५ ॥ मुनिना तत्र शापेन पपातगहनेवने ॥ वहु योजन विस्तीर्ण लिंग परम शोभनम् ॥ ६ ॥ तत्राटव्या सती देहे विजय नाम नामत : ॥ तस्मिन्निमग्नेभूम्यांतु दिव्यतेजसि भास्वर ॥

[शिवपुराण, धर्म संहिता, अध्याय १०, श्लो० १८० से १८४ तक]

विद्यावारिधि पं० ज्वाला प्रसाद मिश्र की टीका :— क्योंकि इस स्थान में ऐसा राजा तो है नहीं जो परदाराओं में प्रीति करनेवाले का लिंगच्छेदन करदे । परदाराओं में प्रीति करनेवाले निर्लज्ज दुरात्मा का लिंग ही काटना चाहिए । उसको इसके सिवाय दूसरा दंड नहीं है । जो गुरुदारा में रति करे वह अपने वृषण और लिंगको स्वयं छेदनकर अंजलि में ले मरने को नैऋत्य दिशा की ओर चला जाय । परन्तु यह दुराचारी दुर्मति तो ज्ञानहीन है सो क्षेत्ररूप हरण करनेवाले को हमें स्वयं दण्ड देना चाहिए । ब्राह्मण या मुनि या जो आततायी हो वह वध्य है । राजा उसको शस्त्र वा बाणोंसे मार डाले । विचार न कर । इस प्रकार उन मुनियोंने शापसे बहुत योजन के उस बनमें वह लिंग पतित हुआ । "[८]

यहां भी लिंगसे तात्पर्य मूत्रेन्द्रियसे ही है । मिश्रजीने यहां लिंगका अर्थ 'ज्योतिर्लिंग' नहीं किया है ।

---

८. श्री वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस, बम्बईमें मुद्रित व प्रकाशित, तुलना करो, पाक्षिक पत्र "सद्धर्म प्रचारक" वाराणसी, वर्ष २, दिनांक १६ नवम्बर, १९३० ई., संख्या ६, पृष्ठ ६

लिंग शब्द पर अन्य कथा

देवाद्याऊचुः—भूत्वातु दक्ष कन्या त्वं शंकरं परिमोहय । अस्माकं वांछितश्चैतत् कुरु सिद्धिं सदा शिवें ॥ १ ॥ एतत् श्रुत्वा वचस्तेषां निरीक्ष्य कमलासनम् । उवाच विस्मयाविष्टा कालिका जगदीश्वरी ॥२॥ देव्युवाचः—शंभुरद्य तनोबालः किं मां संतोषयिष्यति । मम योग्यं पुमांसं तु अन्यं वै परिकल्पय ॥३॥ ब्रह्मो वाचः—शंभुः सर्व गुरुर्देवो ह्यस्माकं परमेश्वरः । महासत्वो महा तेजाः स ते तोषं करिष्यति ॥४॥ शंभु तुल्यः पुमान् नास्ति कदाचिदपि कुत्राचित् । इत्युक्ता ब्रह्मणादेवी वादामित्याह चेश्वरी ॥५॥ ततो विवाहं निर्वर्त्य कृतकृत्या यथागताः । गताः सर्वे महेशोऽपि सत्या सह तदा गृहम् ॥६॥ जगामेरमे सत्याच चिरं निर्भर मानसः । अथ काले कदाचित्तु सत्या सहमहेश्वरः ॥ ७ ॥ रेमे न शेके तं सोढुं सती श्रान्ता भवत्तदा । उवाच दीनया वाचा देवदेवं जगद् गुरुम् ॥८॥ भगवन्नहि शक्नोमि तत्रभारं सुदुःहम् । क्षमस्व मां महादेव कृपांकुरु जगत्पते ॥९॥ निशम्य वचनं तस्या भगवान् वृषभध्वजः । निर्भरं रमणं चक्रे गाढं निर्दय मानसः ॥ १० ॥ कृत्वा सम्पूर्ण रमणं सती च त्यक्त मैथुना । उत्थानाय मनश्चक्रे उभयोस्तेज उत्तमम् ॥ ११ ॥ पपात धरणी पृष्ठे वै व्याप्त माखिलं जगत् । पाताले भूतले स्वर्गे शिवलिंगास्तदा भवन् ॥ १२ ॥ तेन भूता भविष्याश्च शिवलिंगाः सयोनयः । यत्र लिंगं तत्र योनिर्यत्र योनि स्ततः शिवः ॥ १३ ॥ उभयोश्चैव तेजोभिः शिव लिंगं व्यजायत ॥ १४ ॥ इति शिवलिंगोत्पत्ति कथनमिति नारदा पंचरात्रान्तर्गत । तृतीय रात्रे प्रथमाध्याये नारद ब्रह्मा संवादः ॥ "

(शब्दकल्पद्रुमः कोषः चतुर्थकाण्ड प्रथम, द्वितीय खण्ड)

अर्थः—देवता एकत्रित होकर ब्रह्मा के पास गए कि हम तो विवाहित हैं किन्तु शिव अविवाहित हैं। उसका भी विवाह कराना चाहिए। यह सोच कर सब देवता ब्रह्मा तथा विष्णु को साथ लेकर दुर्गा के पास गए और दुर्गासे प्रार्थना की कि आप दक्षकी कन्या बन कर शिवको मोहित करें, हे सदाशिवे! यही हमारी इच्छा है। आप सिद्ध कीजिए ॥१॥ उनकी बात सुनकर ब्रह्मा की ओर देखते हुए विस्मय हाकर कालिका जगदीश्वरी बोली ॥२॥ यह शम्भु आज का बालक क्या मुझे सन्तुष्ट करेगा? मेरे योग्य कोई और नर निर्णय करें ॥ ३ ॥ ब्रह्माजी बोले कि यह शंभुदेव सबके गुरु तथा हमारे स्वामी हैं। महा बलवान् और महातेजस्वी हैं यह आपकी सन्तुष्टि कर देंगे ॥४॥ शंभु के तुल्य कोई नर नहीं है नहीं कोई कहीं इनके तुल्य होगा। ब्रह्मा की यह बात सुनकर देवी बोली बहुत अच्छा ॥५॥ तब देवता लोग विवाहसे निवृत्त होकर कृतार्थ हो गए और अपने घर चले गए। महादेवजी भी सती के साथ अपने घर चले गए ॥६॥ और सती के साथ रमण कर के मन भर प्रसन्न हुए कुछ दिनों के पीछे कभी महादेवजी सती के साथ ॥७॥ रमण करने लगे तो सती थक गई और महादेवजी के बोझ को सह न सकी तब बडी दीन वाणी के साथ जगत् के गुरु महादेवको कहने लगी ॥८॥ हे भगवन्। मैं आपके काठिन भार को सह नहीं सकती। हे महादेवजी! मुझे क्षमा करो हे जगत्पते! मेरे पर कृपा करो ॥ ९ ॥ भगवान् महादेवने उसके वचनको

सुनकर खूब पेट भरकर निर्दयता से रमण किया ॥१०॥ सम्पूर्ण रमण करके छोडी हुई सतीने उठनेकी इच्छा की, तब दोनों का उत्तम वीर्य ॥११॥ पृथ्वी पर गिर पडा और उस वीर्यसे सारा जगत् व्याप्त हो गया। और उससे पृथ्वी स्वर्ग पातालमें योनियों सहित शिव लिंग उत्पन्न हो गए ॥१२॥ जितने लिंग उत्पन्न हो चुके, जितने आगेको होंगे वे योनियों समेत इस तेज से ही उत्पन्न हुए तथा होंगे। जहाँ लिंग होगा वहां योनि अवश्य होगी और जहाँ, योनि होगी वहां शिव अवश्य होंगे ॥१३॥ दोनोंके तेजसे शिवलिंग उत्पन्न हुआ ।।१४॥

यहां पर लिंग तथा योनि स्पष्ट मूत्रेन्द्रियके अर्थमें आया है।

शिवमंदिरोंमें जो 'लिंग' और 'जलहरी' है वह स्पष्ट शिव के मूत्रेन्द्रिय और पार्वती की योनिसे तात्पर्य है। यथा-- "न सुश्रुम यदन्यस्य लिंगमभ्यर्चितं सुरैः ।।२२६॥ कस्यान्यस्य सुरैः सर्वैं लिंगमुक्त्वा महेश्वरम्। अर्च्यतेऽर्चित पूर्वं वा ब्रूहि यद्यस्ति ते श्रुतिः ॥२२७॥ यस्य ब्रह्मा च विष्णुश्च त्वं चापि सहदेवतैः। अर्चयेथाः सदा लिंगं तस्माच्चेष्ट मोहिसः ।।२२८॥ न पद्मांका न चक्रांका न वज्रांका यतः प्रजाः। लिंगांका च भगांका च तस्मान्माहेश्वरी प्रजाः ॥२२९॥ देव्याः कारणं रूपं भावजनिताः सर्वा भगांकाः स्त्रियो। लिंगेनापि हरस्य सर्व पुरुषाः प्रत्यक्ष चिन्हाकृताः ॥ योऽन्यत्कारणमीश्वरात् प्रवदते देव्या च यत्रांकितम्। त्रैलोक्ये स चराचरे स तु पुमान् बाह्यो भवेद्दुर्मतिः ॥२३०॥ पुलिंगं सर्वमीशानं स्त्रीलिंगं विद्धि चाप्युमाम्। द्वाभ्यां तनुभ्यां व्याप्तं हि चराचरमिदं जगत् ॥ २३१ ॥ महाभारत अनु० पर्व अ. १४ ॥

अर्थ—'हमने यह नहीं सुना कि देवताओंने किसी और के लिंगकी पूजा की हो ।।२२६।। महेश्वरको छोडकर दूसरे किस के लिंगको सब देवताओंने पूर्व या अब पूजा हो, काहिए. यदि आपने सुना हो ।।२२७।। जिसके लिंग को ब्रह्मा और विष्णु तथा आप सब देवताओंके साथ सदा पूजते हैं इस लिए वह इष्टतम है ।।२२८।। जिस कारण से प्रजा न पद्म चिन्ह वाली है न चक्र चिन्हवाली और न वज्र चिन्हवाली है । अपितु सारी प्रजा लिंग तथा भगके चिन्हसे अंकित है इस लिए सारी प्रजा महादेवकी है ।।२२९।। देवीने कारण रूप भावसे भगके चिन्ह से अंकित सब स्त्रियां उत्पन्न कीं। और सारेही पुरुष प्रत्यक्षमें महादेवके लिंगसे चिन्हित हैं। जो महादेवसे भिन्न किसी और को कारण कहता है और जो देवीसे अंकित नहीं है वह पुरुष चराचर त्रिलोकीसे बाहर करनेके योग्य है क्यों कि वह दुर्मति है ।।२३०।। जितने पुलिंग हैं वे सब महादेव हैं तथा जो स्त्रीलिंग हैं वे सब पार्बती हैं । इन दोनों के शरीर से ही सारा चराचर जगत् व्याप्त है ।।२३१।। "

वेद व्यास के इस कथन से स्पष्ट निश्चय हो गया कि लिंग के चारों ओर जो गोल बना हुआ है वह केवल जलहरी ही नहीं अपितु पार्वती के भग का चित्र है ।

पौराणिक पं० हरिकृष्ण शास्त्री लिखते हैं कि :—

" ऋषयः ऊचुः ।। रहस्यं पुज्यते लिंगं कस्मादेतन्महामुने ।। शिरःपार्श्वं त्यक्त्वा शेषाङ्गानि सुरासुरैः ।। १ ।। "

अर्थात् :— शौनक प्रश्न करते हैं हे सूत ! शिवजी का सब अंग छोड़ के गुप्त जो लिंगस्थान उसकी पूजा देव दैत्य

सब किस वास्ते करते हैं सो कहो " [९]

इस प्रश्न का उत्तर स्वयं शास्त्रीजी देते हैं ।

" लिंगं विहाय मे मूर्त्तिं पूजयिष्यन्ति ये नराः ।
वंशच्छेदो भवेत्तेषां तच्छ्रुत्वा सर्व देवताः ॥२७॥ "

....सर्वाण्यंगानि संत्यज्य तस्माल्लिंगं प्रपूज्यते । ।२९॥ "

अथः— मेरे लिंग का छोड़ के केवल मूर्त्ति की पूजा करेंगे तो उनका वंशच्छेद होवेगा यह बात सुनते सब देवता ॥२७॥ इसवास्ते सब अंग त्याग करके शिवका लिंग पूजा जाता है ॥[१०]

अन्य प्रमाणः—

" कदाचिद्भगवानत्रिर्गंगाकूले ऽ नसूयया । सार्द्धं तपो महत्कुर्वन् ब्रह्मध्यान परोऽभवत् ॥ ६७ ॥ तदा ब्रह्मा हरिःशंभुः स्व स्व वाहनमास्थिताः । वरं ब्रूहीति वचनं तमाहुस्त सनातन ॥ ६८ ॥ इति श्रुत्वा वचस्तेषां स्वयंभू तनयो मुनिः । नैव किञ्चिद्वच : प्राह संस्थित : परमात्मनि ॥ ६९ ॥ तस्य भावं समालोक्य त्रयो देवा : सनातन : । अनसूयां तस्य पत्नीं समागम्यवचोऽब्रुवन् ॥ ७० ॥ लिंगहस्त : स्वयं रूद्रो विष्णुस्तद्रस वर्द्धन : । ब्रह्मा काम ब्रह्मलोप : स्थितस्तस्या वशं गत : ॥ ७१ ॥ रतिं देहि मदाघूर्णे नोचेत् प्राणांस्त्यजाम्यहम् । पतिव्रताऽनसूयाच श्रुत्वा तेषां वचोऽशुभम् । नैव किञ्चिद्वचा प्राह कोप भीता सुरान् प्रति ॥ ७२ ॥ मोहितास्तत्र ते देवा गृहीत्वा तां बलात्तदा । मैथुनाय समुद्योगं चक्रुर्माया विमोहिताः ॥७३॥ तदा: क्रुद्धा सती सा वै ताञ्छशाप मुनि प्रिया । मम पुत्रा

९ " ब्राह्मणोत्पत्तिमार्त्तण्ड " पृष्ठ २१५ [संवत् १९७९ वि. में श्री वेंकटेश्वर स्टीम यंत्रालय, बम्बई में मुद्रित व प्रकाशित ।
१०. वही पृष्ठ १९१.

भविष्यन्ति यूयं काम विमोहिता : ॥ ७४ ॥ महादेवस्य वै लिंगं ब्रह्मणोऽस्य महाशिर : । चरणौ वासुदेवस्य पूजनीया नरैस्तदा । भविष्यन्ति सुरश्रेष्ठा उपहासोऽयमुत्तम : ॥७५॥ "

(भविष्य पुराण, प्रतिसर्ग पर्व ३, खण्ड ४, अ. १७)

अर्थः—" कभी भगवान् अत्रि अपनी धर्मपत्नी अनसूया के साथ गंगा तट पर महान् तप करते हुए परमात्मा के ध्यानमें लीन हो गए ॥ ६७ ॥ तब ब्रह्मा विष्णु तथा शिव अपनी अपनी सवारी पर चढे हुए अत्रिके पास आए, और वे सनातन देवता अत्रिसे बोले कि आप कोई वर मांगें ॥ ६८ ॥ परमात्मा के ध्यानमें बैठे हुए स्वयंभू के पुत्र अत्रि मुनि उनकी इस बातको सुन कर कुछभी नहीं बोले ॥ ६९ ॥ तीनों सनातन देवता उसके भावको जान कर उसकी पत्नी अनसूयाके पास आकर कहने लगे ॥ ७० ॥ लिंगको हाथ में लेकर महादेवजी, तथा उसके रस को बढाते हुए विष्णु और कामवश होकर वेद का लोप किए हुए ब्रह्माजी तीनों उसके वश में होकर बैठे तथा बोले हे मद से घूर्णित नेत्रों बाली ! रति प्रदान कर, नहीं तो हम प्राणों को यहीं छोडते हैं ॥ ७१ ॥

पतिव्रता अनसूया उनके इस अशुभ वाक्य को सुनकर कोपसे भयभीत हुई देवताओं के प्रति कुछ भी नहीं बोली ॥ ७२ ॥ मोहित हुए वे तीनों देवता तब वहां उस अनसूया को बलपूर्वक पकड़कर मैथुन करने के लिए प्रयत्न करने लगे ॥ ७३ ॥ तब मुनि की प्रिय धर्मपत्नी सती अनसूया ने क्रोधित होकर देवताओंको शाप दिया कि तुम तीनों काम से मोहित हुए

हुए मेरे पुत्र बनोगे ॥ ७४ ॥ महादेव के लिंग को, इस ब्रह्माके शिरको तथा विष्णु के चरणों को लोग पूजेंगे। हे उत्तम देवताओं ! यह, उत्तम, उपहास है ॥७५॥ "

इस प्रमाण में शिर और पैरोंके सहयोग से लिंग भी शरीरके अंग मूत्रेन्द्रियका ही नाम है।

पुराणों के अनुसार शिवलिङ्ग की स्थापना व पूजा का वास्तविक रहस्य है।

वेदके अनुसार शिवजी का कार्य सर्वथा अनुचित था क्यों कि " सप्त मर्यादा: कवयस्ततक्षुस्तासामेकामिदभ्यं हुरो गात्। "
(ऋ. १०।५।६)

इस पर निरुक्त अ. ६, खण्ड २८ में लिखाहै " सप्तैव मर्यादा : कवयंश्चक्रुस्तासोमकामप्याभि गच्छन्नं हस्वान् भवति स्तेयं तल्पारोहणं ब्रह्म हत्यां भ्रूणहत्यां सुरापानं दुष्कृतस्य कर्मण: पुनः पुनः सेवा पातकेऽनृताद्यम्। "

अर्थात् " मेधावी लोगों ने सप्त मर्यादा बांधी हैं उनमेंसे एकका भी अतिक्रमण करने से मनुष्य पापी होता है। वे मर्यादायें कौन हैं? उत्तर:-- चोरी करना, व्यभिचार करना, ब्रह्म हत्या, भ्रूणहत्या, सुरापान, दुष्कर्म को बार बार करना, पाप करके मिथ्या बोलना। "

शिवजीने व्यभिचार किया इसलिये उनका कर्म वेद विरूद्ध हुआ और पापके भागी हुए।

पौराणिक पं० दीनानाथ शास्त्रीकी कल्पना:—" .... अथवा शिवलिंग को शिवका लिंग तथा जलहरीको पार्वती का 'भग' भी आप लोगों के अनुसार मान लिया जावे,

और उनके पूजनीय होनेमें शंका की जावे, तो उस पर वादी यह जानें कि–' जगतः पितरौ वन्दे पार्वती परमेश्वरौ " गौरी शंकर परमात्मा होनेसे जगत् के जननी (माता) जनक (पिता) हैं। जननी–जनक को पूजनीय कौन नहीं मानता ? ॥ [११]

समीक्षा—जो बात सत्य होती है उसे सभी को मानना पडता है। लिंग और भग को मूत्रेन्द्रिय आपको अंतमें माननाही पडा और श्री कालूराम शास्त्री तथा श्री. माधवाचार्य शास्त्रीके लेखों पर हडताल फिर गया।

पुराणों में वर्णित गौरी शंकर कभी परमात्मा नहीं हो सकते हैं ? क्या व्यभिचार करना ही परमात्मा का काम है ?

आप शिवको पिता और पार्वती को माता मानते हैं तो आप पुत्र हुए। शिव लिंग पर आप लोग गंगाजल चढाकर पाप के भागी बनते हैं क्यों कि गंगा शिवजी के जटासे निकलने के कारण उनकी पुत्री हुई। क्या पिताके मूत्रेन्द्रिय पर पुत्री को चढानाही सनातन धर्म है ? शिवजीने गंगाजी को शिर पर धारण किया था इसके लिये पुराण में आया है कि–" रुद्रेण शिरसा धृतः। "

(बृहन्नारदीय पुराण, गंगामहात्म्य, षष्ठोऽध्याय, श्लो. ४४)

अर्थात्- ' जिससे शिवजीने शिर पर उसे धारण कर लिया।' [१२] ' ....कपर्दिनो जटास्रस्ता गंगा लोकैकपावनी) '

(बृहन्नारदीय पुराण, गंगोत्पत्ति, दशमोऽध्याय, श्लो ६३)

अर्थात्–' उसी समय कपर्दी भगवान् की जटासे लोक

---

११. "श्री सनातन धर्मालोक " छटा सुमन, प्रथम संस्करण पृ. ६५३–६५४.

१२. ' पं. राम प्रताप त्रिपाठी, शास्त्री ' पुराणोंमें गंगा ' प्रथम संस्करण पृ. ३४

नी गंगाजी निकल कर....[13] "दक्षिणान्नयनान्मुक्तो जलबिन्दुः
प्रभा। सा सर्वेषु लोकेषु गता वै भूर्भुवादिकम्॥ उपस्थाये मांगां
। तस्मादङ्गेति चोच्यते। नेत्राभ्यां प्रथमाज्जात गंगेति द्विजसत्तम॥
(शिवपुराण सनत्कुमार संहिता, अ. १२)

अर्थात्-' शिवके दक्षिण नेत्रसे श्वेतकान्तिवाला जल निकला
। भूर्भुवादि सब लोकोंमें व्याप्त हो गया और वही यहां स्थित
र पृथ्वीमें आनेसे गंगा कहाती है। हे ब्राह्मणो! वह गंगा
म नेत्रोंसे उत्पन्न हुई है॥[14]

उपर्युक्त दोनों पुराणोंमें एक स्थल पर शंकर की जटासे
। दूसरेमें शंकर के नेत्रसे गंगा की उत्पत्ति मानी गई है।
ने पुत्रोंका सम्बन्ध हुआ।

मूर्त्तिपूजा अवैदिक है। वेदोंमें कहीं भी मूर्त्तिपूजा की चर्चा
। है पुराणोंमें भी मूर्तिपूजाकी निन्दा है। यथा-' यस्यात्मबुद्धिः
पैत्रिधातौ। स्वधीः कलत्रादिषु भौमइज्यधीः। यस्तीर्थ बुद्धि
लेषुकार्हीचित्। जनेष्वाभिज्ञेषु स एव गोखरः॥"

(भागवत स्कन्ध १०, अध्याय २४, श्लोक १३)

अर्थात्-' (कुणपे) पीतल आदि धातुओंकी मूर्तियोंमें और
ा, पित्त, कफ (त्रिधातुके) तीनों धातुओं वाले शरीरोंमें
स्य) जिसकी (आत्मबुद्धिः) आत्मबुद्धि हैं अर्थात् जो जड
चेतन मानता हैं और (कलत्रादिषु) स्त्री पुत्रादि कुटुम्बमें
सकी (स्वधीः) अहंबुद्धि हैं और (भौमें) पृथ्वीके विकार
उत्पन्न पाषाण, लोहा, सोना, चांदी, मिट्टी आदिमें (इज्यधीः)
य बुद्धि है और (कर्हिचित्) कभी (सलिलेषु) + जलोंमें (यः)
(तीर्थबुद्धिः) तीर्थबुद्धि करता हैं (अभिज्ञेषु+जनेषु) विद्वान्

---

१३. वही, पृष्ट ७९
"पुराण-तत्त्व-प्रकाश" द्वितीय भाग, प्रथमावृत्ति, पृष्ठ १८२.
कहीं कहीं सलिलेन, पाठभी है—लेखक।

पुरुषोंके मध्यमें (स एव) वह मनुष्य निश्चय करके ऐसा है जैसा कि (गोखरः। गोषु खर इव गौवों के मध्य में गधा।"
" वासुदेवाग्रतश्चापि रुद्रमाहात्म्य वर्णनम्। रुद्राग्रे वासुदेवस्य कीर्तनं पुरामवर्धनम्॥ दुर्गाग्रे शिव सूर्यस्य वैष्णवाख्यानमेव च। यः करोति विमूढात्मा गार्दभी योनिमाविशेत्॥" | भविष्यपुराण मध्यम प० अ० ७ |

अर्थात्— " जो मनुष्य वासुदेव की मूर्त्तिके आगे शिव की स्तुति करता है और शिवके आगे वासुदेव का कीर्तन करता है, दुर्गा के आगे शिव, सूर्य या विष्णु की स्तुति करता है वह मूर्ख गधे की योनि में जाता है।" [१५]

शिलालिङ्ग का पुजारी शूद्र :—

शिलालिंगं तु शूद्राणां महाशुद्धिकरं शुभम्॥"

[शिवपुराण, विद्येश्वर संहिता, १, अध्याय १८, श्लो० ४९]

अर्थात्: "पाषाण का लिंग शूद्रों के लिए महाशुद्धि का करनेवाला होता है।"

सर्वत्र शिवालयों में पत्थर के लिंगों की पूजा होती है। क्या उनकी पूजा करनेवाले पुराण के अनुसार शूद्र हैं?

"शिवलिगार्चनरतः शिवविप्रस्तु निन्दितः।"

[भविष्यपुराण, मध्यमपर्व २, भाग १ अध्याय ५ श्लो० ८८]

अर्थात्:— शिवलिंग के पूजनेमें लगाहुआ शिवका पुजारी ब्राह्मण निन्दा के योग्य है"

शिव के प्रसाद खाने से पतित:—"मुस्साद लोग पहले ब्राह्मण थे। द्वापर में शिव-निर्माल्य या शिव का प्रसाद खाने से पतित हुए थे। इनके आचार-विचार विशुद्ध नम्बूद्री ब्राह्मणों के से हैं। [१६]

---

१५ "भारत मे मूर्त्तिपूजा" प्रथम संस्करण पृष्ठ २०४

१६ थर्सस्टन : कास्टस एण्ड ट्राइब्स आफ सदर्न इण्डिया तुरे रानाचेरी वाल्यूम ५ पृष्ठ १२०, १२२

सन्दर्भ पुस्तकालय
पु परिग्रहण क्रमांक 2886
दयानन्द महिला म... क्षेत्र

नैशनल फिडरेशन द्वारा स्वीकृत हिन्दी भाषामें

कबड्डी और खो खो

के

नियम

मू० २५ न. पैसे डा. व्यय ०-८ न. पैसे

जयदेव ब्रदर्स बडौदा

Production of Vegetable Oils

By S. D. Vidyarthi B. Sc. (Tech) A.H.B.T.I.

Profusely illustrated over 300 Pages Price Rs. 20 Postage 1-4S nps. Extra.

1 Introduction 2 Composition and Properties of Vegetable Oils, 3 Important Oil Seeds 4 Conveying Equipments 5 Seed Clearing Machines. 6 Preparatory Treatment of Oil seeds. 7 Cooking Oil Seeds 8 Production of Oils 9 Screw Presses and Ghaneess 10 Expellars 11 Solvent Extraction of Oils 12 Filter Pressure 13 Industrial Uses of Oils 14 Factory Planning 15 Lay Out of Oil Mills 16 Routine Systems 17 Oil Yield & Output 18 Cost of Production 19 Storage of Raw Materials 20 Characteristics of Imported Oils and Fats Appendices, Statistics etc.

AIDEVA BROS, P. O. Box 46 BARODA.

Regd. No. B. 6108 ओ३म् साहित्य प्रचारक

पुस्तक विक्रेता BOOKSELLER BARODA

आंग्ल हिन्दी मासिक पत्र वर्ष १० Vol X No. 7 Whole

अंक ७ पूर्ण संख्या ११५ No. 115 दिसंबर १९६०

वा. मू. १) December 1960

अष्टादशपुराण पर्यालोचन शीघ्रही छपेगा

नैसर्गिक नारी सौन्दर्य की लेखिका कु. सुशीला पण्डित द्वारा रचित **आदर्श दम्पती** द्वितीय पुष्प के रूपमें शीघ्रही प्रकाशित होगा ।

ताजिकीस्तान (रूस) में १९ वर्षोंमें चार हजार पुस्तकों की ३७० लाख प्रतियां प्रकाशित ।

प्रेमचंद का ८० वा जन्मदिवस लेनिनग्राड में मनाया गया ।

एक नया प्रकाशन

आनन्द निकेतन के लिए आपकी कुञ्जी इसमें सन्तति सेवा में आधुनिक विकास, प्रथम उत्पन्न पुत्रको कैसे रखना, बचों के स्वास्थ्य के लिए उचित प्रसार, उत्तम माता पिता समाज इ०. मूल्य ३) रु.

✓गीतासार. ले. राजमित्र राजरत्न महात्मा **आत्मारामजी अमृतसरी** यह पुस्तक का छठा संस्करण है। इस में गीता के १०० श्लोकोंको चुनकर रखा है और हिन्दी गुजराती अनुवाद संस्कृत श्लोकों के नीचे दिया है। वह बडा ही उत्तम स्वाध्याय का ग्रन्थ होने के अतिरिक्त नवीन भाषा भी सिखाता हैं। मू. ७५ न. पै डा. व्य. ११ न. पै.

१. अथर्व वेदकी प्राचीनता ३१ न. पै. २. भारतीय इतिहासकी रूपरेखा पर एक समीक्षात्मक दृष्टि २५ ३. आर्य समाज के द्वितीय नियम की व्याख्या ५० न. पै. ४ महर्षि दयानन्दजी कृत वेदभाष्यानु (शीलन १) ५. भारतीय इतिहास [illegible] सुखदेव ब्रदर्स बडौदा

मुद्रक प्रकाशक: [illegible] डोदा। दिसंबर १९६०

परिग्रहण क्रमांक 2886
दयानन्द महिला महाविद्यालय, कुरुक्षेत्र